

गैरज़िम्मेदार युद्ध में पिसते छत्तीसगढ़ के आदिवासी: जाँच दल की रिपोर्ट

- संजय पराते, विनीत तिवारी, अर्चना प्रसाद, नंदिनी सुंदर

छत्तीसगढ़ राज्य में सात ज़िलों से मिलकर बना है बस्तर डिवीजन। ये डिवीजन राज्य और सीपीआई (माओवादी) के बीच संघर्ष के कारण भारत के सबसे सघन सैन्य क्षेत्रों में से एक है। वैसे तो यह संघर्ष १९८० के दशक के बाद से ही चल रहा है, लेकिन राज्य द्वारा प्रायोजित सलवा जुद्ध नामक आंदोलन के साथ २००५ में अपने वर्तमान शिखर पर पहुंच गया है। इसके परिणामस्वरूप एक तो बहुत बड़ी संख्या में ग्रामीणों का शिविरों और पड़ोसी राज्यों में व्यापक विस्थापन हुआ, और दूसरा नतीजा ये निकला कि स्थानीय तौर पर माओवाद या नक्सलवाद के बरक्स, उसके मुकाबले में एक काउंटर उग्रवाद को पैदा किया गया। उनमें स्थानीय युवा नागरिक हैं और उनमें भी अक्सर नाबालिग युवा हैं। आशय ये कि स्थानीय असंतोष दो हिस्सों में बंटकर एक-दूसरे के आमने-सामने हो गया। राज्य की तरफ से माओवाद या नक्सलवाद के खिलाफ खड़े किए गए स्थानीय लोगों को 'विशेष पुलिस अधिकारी' या (एसपीओ) का सरकारी दर्जा दिया गया और उन्हें 'माओवादियों' के खिलाफ रक्षा की पहली कतार में उतार दिया गया। इससे बस्तर में एक प्रकार के गृहयुद्ध की स्थिति बना दी गयी। सरकार द्वारा 'माओवादी समस्या' को मोटे तौर पर एक 'कानून-व्यवस्था' और 'आंतरिक सुरक्षा' की समस्या के तौर पर प्रचारित किया जा रहा था लेकिन इस समझ का खुद योजना आयोग की एक समिति द्वारा २००८ में खंडन कर दिया गया। समिति ने कहा कि इस क्षेत्र में नक्सलवाद के ठोस भौतिक और राजनीतिक संदर्भ हैं और उन्हीं वजहों के तहत नक्सलवाद अपने प्रभाव का विस्तार कर रहा है। समिति की रिपोर्ट में स्पष्ट रूप से इस क्षेत्र में विकास की चुनौतियों की ओर इशारा किया गया और आगाह किया गया कि 'नक्सलवाद' को विशुद्ध फौजी नजरिए से ना देखा जाए। समिति की रिपोर्ट में यह भी साफ इशारा था कि यदि आदिवासी अधिकारों का सम्मान नहीं किया गया तो आदिवासियों और बाकी के समाज के बीच अलगाव की भावना विकसित होने से रोकी नहीं जा सकती।

आगे चलकर, सन २०११ में सुप्रीम कोर्ट द्वारा सलवा जुद्ध को असंवैधानिक घोषित कर दिया गया। सर्वोच्च न्यायालय ने अपने आदेश में कहा कि माओवाद या उग्रवाद से निपटने के लिए किसी भी तरह के एसपीओ इस्तेमाल नहीं किये जाना चाहिए, और राज्य व माओवादियों द्वारा किये गए सभी अपराधों पर कानूनी मुकदमा चलाया जाना चाहिए तथा राज्य और माओवादियों के बीच के इस संघर्ष के शिकार हुए लोगों को मुआवजा दिया जाना चाहिए। सुप्रीम कोर्ट के निर्देशों का पालन करने के बजाय, छत्तीसगढ़ सरकार ने महज एसपीओ का नाम बदल दिया, और उन्हें सशस्त्र सहायक बल (आर्मड ओक्सिलियरी फोर्स) नाम दे दिया गया। इस फोर्स में हाल ही में आत्मसमर्पण किये माओवादियों और अन्य नागरिकों को भर्ती किया गया और उनके समूह को ज़िला रिजर्व समूह का नाम दिया गया। सलवा जुद्ध के निगरानी करने वाले लोगों, एसपीओ और सुरक्षा बलों द्वारा किए गए अपराधों के लिए न तो उन पर एक भी मुकदमा चलाया गया न ही पीड़ितों

को मुआवजा दिया गया। इतना ही नहीं, सरकार ने बस्तर क्षेत्र के सबसे अंदरूनी इलाकों तक में पुलिस, बीएसएफ और सीआरपीएफ के शिविर स्थापित करके अपने फौजी आक्रमण को और भी तीव्र कर दिया है। इसी के साथ ग्रामीणों को रिश्वत देकर मुखबिर बनने के लिए खुलेहाथ से पैसे बाँटे गए और ज़बरदस्ती आत्मसमर्पण करवाए गए। इसने माओवादियों के भीतर उथल-पुथल मचा दी। उन्हें स्थानीय लोगों द्वारा पुलिस की मुखबिरी की खबरें मिलीं और पुलिस से सहयोग का इल्जाम लगाकर उन्होंने भी बदले में स्थानीय आबादी को निशाना बनाना शुरू कर दिया। जाहिर है कि इससे हालत बद से बदतर हुई है। संघर्ष बढ़ा है और जो हालात बनाये गए हैं उनमें निरपराध ग्रामीणों को दोनों पक्षों की ओर से दमन झेलना पड़ रहा है।

इस स्थिति में, भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी (माक्सवादी) के राज्य सचिव संजय पराते, जोशी-अधिकारी इंस्टीट्यूट ऑफ सोशल स्टडीज़, नई दिल्ली के राष्ट्रीय कोर समूह के सदस्य और भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी सदस्य विनीत तिवारी, जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय की प्रोफेसर और अखिल भारतीय जनवादी महिला समिति की सदस्य प्रो. अर्चना प्रसाद, और दिल्ली विश्वविद्यालय की प्रोफेसर नंदिनी सुंदर ने एक समूह के रूप में १२ से १६ मई २०१६ में बस्तर डिवीज़न का दौरा किया। इस दौरे में बीजापुर, सुकमा, बस्तर और कांगेर ज़िलों के गाँव शामिल थे। दौरे के केन्द्र में राज्य और माओवादियों के बीच संघर्ष के स्वरूप को समझना और इन हालात में रह रहे आम ग्रामीणों की स्थिति को जानना था। सभी चार ज़िलों में ज्यादातर अंदरूनी गाँवों को चुनते हुए दौरा किया। मिसाल के तौर पर बीजापुर और बस्तर ज़िलों में हमने राजस्व विभाग और वन विभाग की भूमिका के आकलन की कोशिश के लिए राष्ट्रीय उद्यान की सीमाओं पर स्थित गाँवों का दौरा किया। ग्रामीणों की आय आदि पर हमारे निष्कर्ष ग्रामीणों द्वारा दिए जवाबों और मोटे अनुमान के आधार पर हैं। इनसे स्थिति की विकरालता का अंदाज़ा लगता है किंतु अधिक सटीक परिस्थिति जानने के लिए उचित सर्वेक्षण किए जाने की ज़रूरत है।

अलग-अलग ज़िलों में माओवाद की उपस्थिति कहीं कम कहीं ज़्यादा मिलती है। यही स्थिति राज्य द्वारा किए जा रहे दमन की भी है। इस समय दोनों तरह से सबसे ज्यादा प्रभावित सुकमा ज़िला, बीजापुर ज़िला और बस्तर व सुकमा ज़िले के दरभा व टोंगपाल क्षेत्र हैं, लेकिन पुलिस और सुरक्षा बलों द्वारा की गई फ़र्जी मुठभेड़ें, बलात्कार और गिरफ़्तारी, मारपीट (पुलिस और माओवादियों दोनों के ही द्वारा), आईईडी विस्फोट और मुखबिरों की हत्या (माओवादियों द्वारा) हर ज़िले में ही एक गंभीर समस्या है। अध्ययन दल के निष्कर्षों को इन्हीं संदर्भों में देखा जाना चाहिए।

जमीनी संदर्भ और टकराव के परिणाम

बस्तर इलाके में विकास की दशा बहुत ख़राब है और इसके पीछे बस्तर के साथ उपेक्षा का बर्ताव तथा बस्तर का लगातार होता रहा शोषण है। यही आज के मौजूदा टकराव की बुनियाद बना है। अपने दौरे में अध्ययन दल ने यह पता लगाने की कोशिश की कि वामपंथी उग्रवाद (लेफ्ट विंग एक्सट्रीम या एलडब्ल्यूई) से

निपटने के लिए प्रभावित क्षेत्रों हेतु बनाई गई एकीकृत कार्य योजनाओं को छोड़ भी दें तो भी क्या ग्रामीणों को शासन की सामान्य प्रक्रिया में राज्य द्वारा चलाई जा रही योजनाओं का लाभ प्राप्त हो रहा है। हमने ग्रामीणों की आजीविका के मुख्य आधारों जैसे खेती, तेंदूपत्ता संग्रहण, सार्वजनिक वितरण प्रणाली और राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम (मनरेगा) और वन विभाग द्वारा खोले गए विभिन्न कामों के बारे में जानकारी इकट्ठी की। जितने ब्लॉक्स का हमने दौरा किया, लगभग सभी जगह एक समानता का पता चला कि उन गाँवों को बेहतर सुविधाएँ हासिल थीं जो सुरक्षा बलों के शिविरों के पास थे, बनिस्वत उन गाँवों के जो सुरक्षा बल या पुलिस के शिविरों से दूर और बहुत अंदरूनी इलाकों में थे। सरकार ऐसा करके ये संदेश देना चाहती है कि जो सुरक्षा एजेंसियों के साथ सहयोग करेंगे उन्हें प्रोत्साहन के तौर पर विकास का तोहफा भी हासिल होगा।

मनरेगा

यह एक सूखे का वर्ष है और काम के लिए आंध्र प्रदेश और आगे तक बड़े पैमाने पर पलायन हो रहा है। केवल दूसरे प्रदेशों में मिलने वाले काम के माध्यम से किसी तरह लोग जीवित हैं। उदाहरण के लिए, यदि वे आंध्रप्रदेश २ या ३ महीने के लिए जाते हैं तो उन्हें लगभग ८ से ६,००० रुपये की बचत लायक आमदनी होती है। इसके अलावा अनेक गाँवों के हजारों ग्रामीणों-किसानों की आमदनी का पूरे वर्ष में एकमात्र ज़रिया तेंदूपत्ता बीनने का होता है। तेंदूपत्ता बीनने का काम मुश्किल से साल में १० से १५ दिन का होता है।

गाँवों में बेरोज़गारी की इस हालत को ध्यान में रखते हुए ही मनरेगा की योजना लागू की गई थी हालाँकि जहाँ हम गए वहाँ अनेक जगहों पर ऐसा कोई संकेत नहीं मिला कि प्रशासन ने लोगों की बेरोज़गारी की हालत देखते हुए मनरेगा के तहत आवश्यक ग्रामीण रोज़गार प्रदान किया हो। उदाहरण के लिए, सोमनपल्ली गाँव को लें जो सड़क के पास पंचायत मुख्यालय का गाँव भी है। यहाँ सभी ग्रामीणों के पास राशन कार्ड हैं। लगभग सभी परिवारों से एक व्यक्ति को एक साल में ४५ दिनों के लिए मनरेगा का काम मिल जाता है और उन्हें प्रतिदिन १६० रुपये के दर पर भुगतान भी मिल जाता है। तेंदूपत्ता तोड़ने का काम साल में करीब १५ दिनों के लिए मिलता है। सरकारी दर १५० रुपये प्रति सैकड़ा है (प्रत्येक ५० पत्तों के १०० बंडल) और व्यापारी ५० रुपये अतिरिक्त देते हैं। इस तरह ग्रामीणों को तेंदूपत्ते के १०० बंडलों के लिए २०० रुपए प्राप्त हो जाते हैं। एक औसत परिवार एक मौसम में इस गाँव में तेंदूपत्ता तोड़कर करीब १२-१५ हजार कमा लेता है लेकिन ये बहुत हद तक इस बात पर भी निर्भर करता है कि तेंदूपत्ते सघन आए हैं या विरल। इस गाँव में धान की औसत उपज तीन क्विंटल प्रति एकड़ ही है, इसलिए आमतौर पर इतना उत्पादन नहीं होता कि उपज को बाजार में बेचा भी जा सके। फिर भी अगर सबकुछ ठीकठाक रहे तो आमतौर पर ये छोटे और सीमांत किसान धान उत्पादन का लगभग ५० प्रतिशत तक बेचकर २५०० रुपये प्रति एकड़ का लाभ प्राप्त करते हैं। यहाँ जमीन औसतन तीन एकड़ प्रति परिवार है। कुल मिलाकर एक परिवार में १३००-१५००

रुपये प्रति माह की आमदनी आती है। एक और पड़ोसी गाँव ताड़मेंड़ी सागमेटा पंचायत में आता है और इस गाँव से वनमार्ग पर १४ किमी की दूरी पर मौजूद है। इस गाँव में मनरेगा के काम की बात तो दूर, ग्रामीणों में जिनमें बुजुर्ग और नौजवान दोनों ही मौजूद थे, किसी ने मनरेगा या १०० दिन के काम की योजना का नाम भी नहीं सुना था। किसी गाँववाले ने तो नाम सुनकर हमसे पूछा कि मनरेगा किसी दुकान का नाम है क्या। उनकी राशन की दुकान भी १४ किलोमीटर दूर एक गाँव फरसेगढ़ में है। इतनी दूर जाने के बाद भी राशन दुकान से पूरा सामान नहीं मिलता। राशन देने के पहले आधार कार्ड माँगते हैं और केरोसिन तेल मिले तो ज़माना हो गया। वैसे इस गाँव में पानी की उपलब्धता पास में नाला और तालाब होने से पूर्व उल्लेखित गाँव सोमनपल्ली से बेहतर है लेकिन इस बरस सूखे की वजह से उन्हें अपनी ज़मीन से कुछ भी उत्पादन हासिल नहीं हुआ। इस गाँव के घरों में मुश्किल से १००० रुपये प्रति महीने की आमदनी हो पाती है।

ऐसा नहीं कि मनरेगा के तहत कहीं काम ही नहीं हुआ। लेकिन जहाँ हुआ वहाँ के लोगों को तजुर्बा क्या रहा! कांग्रेस नेशनल पार्क के कोलेंग पंचायत के गाँवों में २००६ में ग्रामीणों ने मनरेगा का कार्य किया था। भडरीमहू गाँव के ग्रामीणों ने हमें बताया कि उन्होंने ६-७ साल पहले मनरेगा के तहत एक सड़क बनाने का काम किया था लेकिन उनकी मजदूरी का अभी तक भुगतान नहीं किया गया है। इसलिए जब हाल ही में ठेकेदार ने उन से मनरेगा के काम करने के लिए संपर्क किया, तो उन्होंने उसके लिए काम करने से मना कर दिया। कोलेंग में उन्हें फरवरी २०१६ के बाद से, यानी ३-४ महीने से भुगतान नहीं किया गया है।

इसी तरह कांग्रेस ज़िले में, एचपी गाँव के ग्रामीणों को तीन परिवारों के खेतों को समतल करने के लिए तीन महीने का मनरेगा का काम दिया गया था। अब तक दो खेतों के लिए भुगतान किया गया था। तीसरे खेत का काम भी मार्च में समाप्त हो गया था, लेकिन उसका भुगतान मई तक नहीं हुआ था।

जिन गाँवों का हमने दौरा किया वहाँ मनरेगा की स्थिति की अधिकृत जानकारी पाने के लिए हमने मनरेगा की वेबसाइट पर मौजूद आँकड़ों को भी तलाशा तो निम्नलिखित ब्योरा सामने आया।

मनरेगा की वेबसाइट पर एक नज़र - अध्ययन दल द्वारा दौरे के लिए चयनित पंचायतों में ग्रामीणों के लिए २०१५-१६ में उत्पन्न काम के बारे में आँकड़े

पंचायत	खोले गए काम से सृजित हुए व्यक्ति कार्यदिवस, २०१५-२०१६	सक्रिय मजदूरों की संख्या , २०१५-२०१६	प्रति व्यक्ति औसत कार्यदिवस
कोलेंग	१५७६	३७१	४.१२
सौतनार	४३०५	६०३	७.१३
सागमेता	१०८१०	३१८	३३.६६
टोंगपाल	२५३६	२३५	१०.८०

अब्ल तो मनरेगा के तहत क्षेत्र में जितने काम खोले जाने चाहिए थे, वो खोले नहीं गए। उस पर भी जो काम मज़दूरों से करवाकर उन्हें मदद पहुँचाने की कोशिश करनी चाहिए थी वहाँ पूरे क्षेत्र में हमें मशीनें काम करती मिलीं। इससे काम में दोतरफा कमी आई।

सुकमा ज़िले से एक मामले में, हमने सुना कि सीआरपीएफ ने ग्रामीणों को मनरेगा काम करने के लिए तैयार किया (सुरक्षा बलों के लोग गाँववालों से शिविर में साफ-सफ़ाई इत्यादि के काम बाध्यकारी और जबरिया भी करवाते हैं)। शिविर तो मनरेगा के काम के लिए लगा लेकिन शिविर में बड़े पैमाने पर एक आत्मसमर्पण समारोह भी आयोजित किया गया जिसमें भाग लेने के लिए सरपंच को भी मजबूर किया गया। इससे माओवादी सरपंच के खिलाफ और खफ़ा हो गए कि उसने ज़िला प्रशासन के साथ सहयोग किया। सज़ा के तौर पर सरपंच सहित अन्य ग्रामीणों को १२ दिनों के लिए माओवादियों ने अपनी हिरासत में रखा, और कुछ ग्रामीणों को मार-पीटा भी।

कांगेर राष्ट्रीय वन क्षेत्र में हमने पाया कि वन विभाग, जो बाँस कटाई का रोजगार ग्रामीणों को उपलब्ध कराता था, उसने वो काम बंद कर दिया था। ग्रामीणों के पास अब कोई काम नहीं था। इंद्रावती राष्ट्रीय उद्यान क्षेत्र में, ग्रामीणों ने बताया कि वन विभाग ने उनके गाँव आना ही बंद कर दिया और इन ग्रामीणों को अपने हाल पर छोड़ दिया है।

ज़मीन का पट्टा और सरकारी नौकरियाँ

छत्तीसगढ़ का दावा है कि वन अधिकार अधिनियम के तहत किए गए दावों को शतप्रतिशत सुलझा लिया गया है। वन अधिकार अधिनियम के तहत ८.५ लाख दावे आये जिनमें से ३.४७ लाख दावों को स्वीकार और ५.०७ लाख दावों को खारिज कर दिया गया। अपने दौरे में हमने पाया कि कई लोगों के पास अभी तक ज़मीन का पट्टा नहीं है।^१ उदाहरण के लिए ताड़मेंडरी गाँव में ३८ परिवारों में से केवल १०-१५ घरों के पास पट्टे थे। अंबेली और गट्टापल्ली जैसे गाँव, जिनकी सलवा जुड़ूम में भी सक्रिय भागीदारी रही थी और जो सड़क किनारे ही बसे हुए हैं, उनके रहवासियों को पट्टे मिल गये थे। इस क्षेत्र में कई शिक्षित युवा थे जिन्हें कहीं भी रोज़गार नहीं मिला था और जो घर पर खेती कर रहे थे। ये पूरा क्षेत्र ही बारिश की खेती पर निर्भर है। एक तो जोत की ज़मीन ही ज़्यादा नहीं है और एक फसल की खेती में काम वैसे भी ज़्यादा दिनों का नहीं रहता।

सौतनार पंचायत में ग्रामीणों का माओवादियों के खिलाफ़ असंतोष का एक कारण ये भी सामने आया कि पुलिस आत्मसमर्पण कर चुके माओवादियों को तो ज़िला रिजर्व ग्रुप में नौकरियाँ दे देती है, लेकिन जब

^१ भारत के गृह मंत्रालय की वार्षिक रिपोर्ट, २०१५-१६. पृष्ठ २८.

सामान्य अदिवासी नवयुवक बस्तर बटालियन में नौकरियों के लिए आवेदन करते हैं, तो उन्हें सालों इंतज़ार करना पड़ता है पर नौकरियाँ नहीं मिलती। ज़िले भर में, बेरोज़गारी एक बहुत बड़ी समस्या है।

स्कूल

चूँकि सलवा जुझूम के दौरान सरकारी स्कूलों को पुलिस अपना कैम्प बनाकर माओवादियों से लड़ने के लिए इस्तेमाल करती थी इसलिए २००६ और २०१० के बीच कई गाँवों में स्कूलों की इमारतें माओवादियों द्वारा नष्ट कर दी गई थीं। बाद में पुलिस तथा अन्य सुरक्षा बलों ने अपने कैम्प बनाने के लिए अलग ज़मीनों पर बैरकों का निर्माण कर लिया तो माओवादियों द्वारा स्कूल भवन नष्ट करने का सिलसिला भी थम गया। लेकिन सौतनार में माओवादियों ने स्कूल २०१३ में भी नष्ट किया था।

सलवा जुझूम के दौरान प्रशासन ने सभी स्कूलों को सैन्य शिविरों में तब्दील कर दिया था और उनमें वो लोग भी रहते थे जो गाँवों से पुलिस द्वारा माओवादियों से सुरक्षा की दृष्टि से लाए गए थे। अब जब लोग वापस अपने गाँव चले गए हैं तब भी सुरक्षा बलों ने स्कूलों पर से अपना कब्ज़ा खत्म नहीं किया है। ऐसा ही एक आश्रम स्कूल है जो हमने मुकाबेली गाँव में देखा जिसका आश्रम स्कूल अब वास्तविक गाँव से २० किमी दूर सुरक्षा शिविर के सामने फारसेगढ़ में है। यह साफ़ तौर पर २००६ के शिक्षा के अधिकार अधिनियम (आरटीई) का उल्लंघन है। ज़िले भर में, गाँवों में प्राथमिक स्कूलों को बहाल करने के बजाय, सरकार सुरक्षा शिविरों के समीप ५००-१००० क्षमता वाले पोर्टाकेबिन (जिन्हें एक जगह से दूसरी जगह ले जाया जा सके) स्कूलों और आश्रमों का निर्माण कर रही है।

राज्य द्वारा दी गई दलीलों में से एक यह है कि माओवादी ग्रामीणों पर सरकार के साथ सहयोग नहीं करने के लिए दबाव डालते हैं जिसकी वजह से इस क्षेत्र का विकास रुका रहा है। यह एक आंशिक सत्य हो सकता है। जैसा ऊपर उल्लेख किया है कि हमने कुछ जगहों पर माओवादियों द्वारा ग्रामीणों को धमकी देने के बारे में सुना लेकिन हमने यह भी पाया कि जिन क्षेत्रों में कोई माओवादी असर नहीं है, वहाँ भी विकास का कोई सबूत नहीं है और छत्तीसगढ़ का देश के मानव विकास सूचकांक के निचले सिरे में होना जारी है।

सुरक्षा शिविरों द्वारा कब्ज़े से बदल रहा है क्षेत्र का दृश्य

कांकेर ज़िले में प्रवेश करते ही किसी को भी यह साफ़-साफ़ आभास होने लगता है कि वो कहीं लड़ाई के मैदान में आ गया हो। यहाँ तक कि केसकाल घाटी के मुहाने पर बने सरकारी डाक बंगले को भी सीआरपीएफ, बीएसएफ, आईटीबीपी आदि से मिलकर बने केन्द्रीय सशस्त्र पुलिस बल (सीएपीएफ) द्वारा हथिया लिया गया है। इस पूरे क्षेत्र में भारी रूप से सैन्य उपस्थिति है। हर ५ किमी पर कैम्प है। कांकेर

ज़िले में राओघाट के आसपास के गाँवों में तो हर २ किमी पर सीएपीएफ शिविर है। कुछ जगह तो हमें एक किलोमीटर के अंदर ही दो-दो कैम्प भी मिले। यह ५वीं अनुसूची, पंचायत एक्सटेंशन शिड्यूल्ड एरियाज़ एक्ट, १९६६ (पेसा अधिनियम) और अनुसूचित जनजाति और अन्य वनवासी (वन अधिकारों की मान्यता) अधिनियम, २००६ (एफआरए) का पूरी तरह उल्लंघन है, जिसके तहत गाँव की ज़मीन लेने के पहले ग्रामसभा की सहमति लिया जाना और ग्रामीणों के दावों का निपटारा अनिवार्य है। गृह मंत्रालय की वार्षिक रिपोर्ट, २०१५-१६ के अनुसार पर्यावरण एवं वन मंत्रालय ने वामपंथी उग्रवाद से प्रभावित क्षेत्रों में १९८० के वन संरक्षण अधिनियम की धारा २ के तहत, विकासात्मक उद्देश्यों के लिए एक से पाँच हेक्टेयर तक की ज़मीन का भूउपयोग विकासात्मक कार्यों के लिए बदले जाने की सामान्य स्वीकृति दी है। हालाँकि, इस मद में सरकार ने 'संवेदनशील क्षेत्रों में पुलिस थानों, चौकियों, सीमा चौकियों व वॉच टॉवरों के रूप में पुलिस प्रतिष्ठानों' और दो लेन सड़कों को चालाकीपूर्वक डाल दिया है। यह स्पष्ट नहीं है कि इस अनुमति को पेसा अधिनियम और एफआरए द्वारा तय की गई शर्तों की अनदेखी करने का हक है। कायदे से तो पुलिस चौकियों को भी वैसे ही ग्रामीणों के साथ विचार-विमर्श करके बनना चाहिए जिस तरह सिंचाई सुविधाएँ, स्कूल, डिस्पेंसरियाँ आदि बनाये जाते हैं।

ज़िले भर में ग्रामीणों ने बताया कि सुरक्षा बलों के शिविर रातोंरात लगा दिये जाते हैं, और लोगों की ज़मीनों को बिना उनके अधिकारों का या मुआवजे का निपटारा किये ले लिया जाता है। कांकेर ज़िले के एचपी गाँव में तीन लोगों ने अपनी मरहन्^२ की ज़मीन खो दी जिसमें वे कई वर्षों से खेती कर रहे थे, और जिसके लिए उन्हें एफआरए के तहत कानूनन स्वामित्व दिया जाना चाहिए। भय की वजह से वे शिविर के अधिकारियों को कुछ भी कहने में असमर्थ हैं। पूरे इलाके में पर्यावरण की भारी तबाही होती साफ दिख रही है। सड़क किनारे खड़े पेड़ों को भी सुरक्षा उद्देश्यों के लिए काटने की मंजूरी दी जा रही है। सड़क के दोनों ओर हमें सैकड़ों या शायद हजारों की तादाद में ढूँढ़ देखने को मिले।

राओघाट क्षेत्र में, जहाँ शिविरों की बहुलता है, ग्रामीणों ने बताया कि वहाँ माओवादियों ने दो-चार साल पहले से ही गाँवों में आना बंद कर दिया था। उन्होंने कहा कि इससे पहले सुरक्षा बल मुर्गियों को लेने और ग्रामीणों से पैसे छीन लेते थे लेकिन अब तो वह भी नहीं रह गया है। ऐसे में सुरक्षा बलों की इतनी सघन उपस्थिति की ज़ाहिर तौर पर कोई वजह समझ नहीं आती। हमें यह भी महसूस हुआ कि कुछ स्थानों में ग्रामीणों ने सुरक्षा बलों द्वारा किए गये बलात्कार या अन्य किसी दुराचार की बातें हमसे इसलिए नहीं कीं ताकि आगे उनके लिए सुरक्षा बलों की ओर से मुसीबत ना हो जाए। जहाँ तक कैम्पों की मौजूदगी से क्षेत्र के विकास की बात की जा रही है वहाँ हमें तो नहीं लगता कि विकास का कोई रिश्ता इन सुरक्षा बलों के कैम्पों से है। मसलन शिविरों के होने से स्थानीय लोगों को भूमि के पट्टे या सिंचाई सुविधाएँ आदि मिलने लगती तो कहा भी जा सकता था। लेकिन ऐसा कुछ नहीं हो रहा है। बल्कि जो हो रहा है उस विडंबना को

² बिना पट्टे की कम उपजाऊ ज़मीन

एक ग्रामीण ने अपने शब्दों में इस तरह कहा, 'पहले नक्सली सड़क निर्माण बंद करवाते थे। अब जब कि वे चले गए हैं, सरकार हम पर कोई ध्यान नहीं देती।'

सुरक्षा बलों के शिविरों के विस्तार ने ग्रामीणों और माओवादियों के बीच तनाव को और बढ़ा दिया है, जैसा कि हमने बस्तर ज़िले के सौतनार और कोलेंग गाँवों में पाया, पुलिस द्वारा गिरफ्तारी और आत्मसमर्पण पर माओवादी जवाबी कार्रवाई करते हैं जिसके बदले में ग्रामीण और शिविरों की माँग करते हैं और इस तरह ये एक अपने आपको दोहराने वाली श्रृंखला बन जाती है जो और अधिक माओवादी प्रतिशोध आमंत्रित करती है। इस सब से ग्रामीणों में असुरक्षा की भावना बढ़ गयी है। इस परिस्थिति में गाँवों के भीतर विभाजन और एक नये किस्म के सलवा जुद्ध तथा उससे होने वाले विस्थापन और विभाजन की आशंका बढ़ गई है।

नीचे लिखे विवरण के अनुसार इन शिविरों ने महिलाओं के लिए भी काफी असुरक्षा का माहौल बनाया है।

अत्याचार और दमन के कुछ खास मामले

मारजूम फर्जी मुठभेड़

मई २०१६ के पहले सप्ताह में, दंतेवाड़ा ज़िले के मारजूम गाँव में पुलिस-अर्धसैनिक बलों और माओवादियों के बीच क्रॉस फायरिंग में एक पुलिसकर्मी घायल हो गया था और एक की मौत हो गई थी। कुछ दिनों के बाद, ७ मई, २०१६, को जंगलपारा के ग्रामीण एक पारंपरिक त्योहार बीजपंडुम मनाने के लिए भीमापारा गये। गाँव में दो पारा हैं- जंगलपारा और भीमापारा (पारा बस्तियों के लिए एक स्थानीय शब्द है, जो मोहल्ला या टोला की जगह इस्तेमाल होते हैं)। गायन, नृत्य और शिकार, जो त्योहार का हिस्सा हैं सुबह ६ बजे से शुरू हो गया। दोपहर १२ बजे के आसपास, पड़ोसी गाँव चित्रपाल के ग्रामीणों ने इन त्योहार मनाने में मस्त ग्रामीणों को सूचित किया कि जंगल में फायरिंग हुई और दो लड़कों गोली मार दी गई। १७-१८ वर्षीय दो लड़के, मरकाम मंगलू और पोडीयम विज्जा, जो पास ही पानी की धारा में स्नान करने के लिए गये थे, जंगलपारा ग्रामीणों के समूह से गायब पाए गए। ग्रामीणों के अनुसार, सुरक्षा बलों के गश्ती दल ने उन्हें अकेला पाया, उन्हें गोली मार दी और उन्हें माओवादियों के रूप में घोषित कर दिया। पुलिस द्वारा समाचार पत्रों को सूचित किया गया कि दोनों लड़कों माओवादी थे और वे एक मुठभेड़ में मारे गए।

जैसे ही हम दंतेवाड़ा पहुंचे, हमें पता चला कि सीपीआई के पूर्व विधायक नंदा सोरी और मनीष कुंजाम ने उसी शाम यानी १२ मई २०१६ की शाम को एक पत्रकार वार्ता बुलाई है।^३ उनके सूत्रों ने उन्हें बताया था कि मारे गए लड़के निर्दोष आदिवासी थे। उन्होंने अपनी तरफ से जाँच-पड़ताल करने के बाद पत्रकार वार्ता में मारजूम के ग्रामीणों को लाया और ग्रामीणों ने पुलिस पर फर्जी मुठभेड़ का आरोप लगाया। ग्रामीणों ने

³ <http://epaper.patrika.com/c/10263865>

कहा कि दोनों लड़कों का माओवादियों के साथ कोई संबंध नहीं था। परिवार के सदस्यों, रिश्तेदारों और अन्य ग्रामीणों के साथ मौजूद गाँव की सरपंच सुश्री बालमती, और आँगनवाड़ी सहायिका आईती ने भी पत्रकार वार्ता में पुष्टि की कि पुलिस ने झूठे आरोप लगाए हैं। उन्होंने कहा कि वे मृतक लड़कों को अच्छी तरह जानते थे और ये कोई पुलिस मुठभेड़ नहीं बल्कि पुलिस द्वारा निर्दोष आदिवासी लड़कों की हत्या थी। उन्होंने यह भी कहा कि बाद में उस दिन, दो और लड़के, देव और पोडियम को गाँव में उनके घरों से गिरफ्तार किया गया।

मरकम मंगलू के पिता संतू का पहले ही निधन हो गया था। उसकी माँ गंगी पति और बेटे के बिना अब अकेली बची हैं। दूसरा मृतक लड़का पोडियम विज्जा, पोडियम गोधा और सुकड़ी का बेटा था। पिता और माँ, दोनों ही अपने बेटे की मौत के साथ टूट गये थे। वे सब चुप बैठे थे और प्रेस द्वारा पूछे सवालियों का डूबी आवाज़ में संक्षिप्त शब्दों से उत्तर दे रहे थे। उनकी भाषा कोया है इसलिए कॉमरेड मनीष कुंजाम और दूसरे अनुवाद में उनकी मदद कर रहे थे। मारजूम गहरे घने जंगल में स्थित है। यह तथ्य इस बात से भी स्पष्ट हो रहा था कि कोई भी मीडिया का व्यक्ति घटना के बाद गाँव तक पहुँचने में ७ मई से १२ मई तक सफल नहीं हो पाया था।

जो लोग खुद को हिंदी में ही बहुत मुश्किल से अभिव्यक्त कर पाते हैं उनसे ये उम्मीद करना कि वे न्याय पाने के लिए अदालतों के चक्कर लगा पाएँगे, असंभव है। मीडिया के लोगों में से एक ने जब मंगलू के साथ बरामद किए गए ७५५० रुपये के पुलिस के आरोप के बारे में ग्रामीणों से पूछा तो उसकी माँ गंगी, आँगनवाड़ी सहायिका आईती और सभी दूसरों ने गुस्से में कहा कि वह पैसे इमली बेचने और डबरी (गह्वा) खुदाई की मज़दूरी मिलने के बाद उसने इकट्ठे किये थे। पुलिस या चोरों से पैसा खोने के डर से वह उसे हर समय साथ रखता था यहाँ तक कि उसने वो पैसे माँ को भी नहीं दिये थे। उन्होंने कहा कि पुलिस ने पहले हमें कई बार पीटा था। वे बुजुर्ग लोगों को भी नहीं छोड़ते। हम दोनों तरफ़ से पीटे जाते हैं। नक्सली कहते हैं कि हमें पुलिस से बात नहीं करनी चाहिए और अगर हम बात करते हैं वे हम पर पुलिस का मुखबिर होने का आरोप लगाते हैं और फिर वे हमें सज़ा देते हैं। दूसरी ओर, पुलिस के लोगों का कहना है कि हम उन्हें राशन और अन्य चीज़ों को उपलब्ध कराके नक्सलियों की मदद करते हैं। इस इल्जाम की बिना पर पुलिस भी हमें अक्सर पीटती है। जब भी पुलिस गाँव में आती है वो हमारे गाँव के सभी मुर्गी-बकरी ले जाती है। राशन या अन्य कोई भी चीज़ मिलने का हमारे पास कोई साधन नहीं है। हमारी राशन की दुकान भी १५ किमी दूर कटेकल्याण गाँव में है। ऐसी परिस्थितियों में हम बस किसी तरह से जी पा रहे हैं।

अंत में ग्रामीणों ने एक बहुत ही गंभीर बात के बारे में बताया। उन्होंने कहा कि दो लड़कों की हत्या के बाद, सुरक्षा बल हमारे गाँव में दो लड़कों को उठाने के लिए आया था। गाँव आने पर उन्होंने बहुत से गाँववालों को पीटा और जाते वक्त हमारे पास जो भी इकट्ठा किया हुआ चावल और खाद्यान्न था, उसमें कुछ दवाई छिड़क गये। वो जो भी था उसमें बहुत ही बुरी बदबू आ रही थी। उसकी बदबू बर्दाश्त नहीं हो रही थी। हमें लगा कि वह ज़हर था, इसलिए हमने चावल फेंक दिये। उनके इस आरोप की जाँच के लिए कोई

रास्ता नहीं था, लेकिन अगर यह सच था तो यह सुरक्षा बलों के खिलाफ़ एक बहुत ही गंभीर अपराध का आरोप है। यह स्तब्ध करने वाला तथ्य है कि जो लोग सरकार की ओर से ना के बराबर सहयोग के साथ किसी तरह केवल अपने दम पर जीवित हैं, सरकार की ही एक अन्य शाखा वास्तव में उन्हें मारने की कोशिश करती है।

पत्रकार वार्ता लगभग ख़त्म ही हो गई थी जब ग्रामीणों ने कहा कि मंगलू मरकाम की गाँव की ही एक लड़की पाईके के साथ सगाई हो चुकी थी। पाईके को पुलिस ने एक नक्सली होने के इल्जाम में इसी साल की शुरूआत में फरवरी में गिरफ़्तार किया था। गाँववालों के मुताबिक वह भी निर्दोष थी। मंगलू जल्द ही उसकी रिहाई की उम्मीद कर रहा था और अपने वैवाहिक जीवन के लिए पैसे इकट्ठा कर रहा था। रुपये ७५५० की राशि भी उसके वैवाहिक जीवन के सपने की तैयारी थी जो उसके साथ ही चली गई। आदिवासी महासभा के अध्यक्ष मनीष कुंजाम ने प्रेस को बताया कि वे पहले भी पुलिस और प्रशासन के साथ पाईके की गिरफ़्तारी के संबंध में मिले थे। उन्होंने कहा कि एक तरफ़ खुद पुलिस और सरकार भी ये मानते हैं कि नक्सली शादी नहीं करते तो फिर पाईके और मंगलू कैसे नक्सली हो सकते हैं जब वे सगाई कर चुके थे और शादी करने की योजना बना रहे थे।

सीपीआई और आदिवासी महासभा ने १६ मई २०१६ को मारजूम घटना की निष्पक्ष जाँच के लिए एक विरोध प्रदर्शन की घोषणा की। हमें समाचार पत्रों के माध्यम से सफल प्रदर्शन के बारे में बाद में पता चला।^४

नाटकीय समर्पण, बड़े पैमाने पर गिरफ़्तारियों और नागरिक कार्रवाई कार्यक्रमों का गाँवों पर असर, माओवादियों द्वारा मारपिटार्ई, सलवा जुडूम की तर्ज पर गाँवों का बँटवारा

कुमाकोलेंग: हमने कुमाकोलेंग, थाना लेडा, टोंगपाल ब्लॉक, कुमाकोलेंग पंचायत का दौरा किया जहाँ हमने सुना कि माओवादियों ने ग्रामीणों को हाल में बुरी तरह पीटा था। इस गाँव में धाकड़ जाति के ओबीसी समूह (११० में से ६० परिवार) की बहुलता है। बाकी के कल्लर, रावत, धुर्वे और गोंड हैं। इस गाँव में भी पिछले पांच वर्षों से मनरेगा का कोई काम नहीं खुला था। इस साल २०-२५ दिनों के लिए वह काम मिला है। गाँव में जो थोड़े बहुत ग्रामीण बचे थे उन्होंने बताया कि चुनाव से पहले सरकार ने आँखें बंद करके राशन कार्ड बाँटे और चुनाव के बाद उनमें से बहुत सारे राशन कार्ड वापस ले लिए गए। गाँव में हमें बताया गया कि वहाँ पुरुषों के लिए कृषि मजदूरी दर १०० रुपये और महिलाओं के लिए ६० रुपये है।

⁴ http://naiduniaepaper.jagran.com/Article_detail.aspx?id=56001&boxid=17262&ed_date=2016-5-20&ed_code=43&ed_page=13; <http://epaper.patrika.com/c/10472897>

जब हमने दौरा किया, हमने पाया कि गाँव के अधिकांश घरों में कोई नहीं रह रहा था। ये माओवादियों की १७ अप्रैल को की गई ग्रामीणों की पिटाई का नतीजा था। उसके बाद से गाँव बड़े पैमाने पर सुनसान था। उस पिटाई से ८ ग्रामीणों जिनमें दो महिलाएं भी शामिल थीं, को अस्पताल में भर्ती करना पड़ा था। लोग माओवादियों द्वारा पिटने के डर से गाँव में लौटने से कतरा रहे थे। घटनाओं का क्रम इस प्रकार है:

माओवादी २००४ और २००७-८ के बीच इस क्षेत्र में आये थे। उन्होंने २००८ में एक जन अदालत आयोजित की जिसमें माओवादियों ने ग्रामीणों से समर्थन के लिए कहा। ग्रामीणों ने इनकार कर दिया, क्योंकि वे अपने गाँव में सलवा जुद्ध जैसी स्थिति नहीं चाहते थे। माओवादियों ने फिर गाँव के नेताओं, मरकमिरास से गोत्ती राम कर्मा और दोमू मरकम, कुमाकोलेंग से जगदेव ठाकुर और दूनू को मारा। बाद में माओवादियों ने मुखबिर होने के आरोप में कुमाकोलेंग से धाकड़ समाज से बेनी, और २०१० में, नामा के सोमारु को भी मार डाला। (यहाँ तक कि नामा में लोगों ने सोमारु की हत्या के बारे में अपना असंतोष और नाराज़गी भी ज़ाहिर की - उन्हें नहीं लगता था कि वह दोषी था)।

लेकिन कई लोग दलम (माओवादियों की सशस्त्र शाखा) में शामिल भी हो गए और गाँव में संघम (निहत्थे गाँव स्तर के कार्यकर्ताओं) भी बनाए गए। काचीरास के पास चिंतलनार में पुलिस के साथ माओवादियों की एक मुठभेड़ हुई। फायरिंग के दौरान दलम नेताओं में से एक सोनाधार की डायरी छूट गई। (सोनाधार बाद में ओडीशा में पुलिस मुठभेड़ में मारा गया था)। सोनाधार की डायरी में जिन ग्रामीणों ने माओवादियों को भोजन या अनाज आदि की मदद दी थी, उनके नाम शामिल थे। पुलिस ने उन ग्रामीणों पर दबाव डाला जिनके नाम डायरी में थे और उन्हें गिरफ्तार करने की धमकी दी। जनवरी, २०१६ में एक माओवादी शंकर ने आत्मसमर्पण किया था। उसका इस्तेमाल संघम सदस्यों की पहचान करने के लिए किया गया। पुलिस स्थानीय ग्रामीणों पर शंकर का नाम लेकर भी दबाव डाल रही थी। आखिरकार, मार्च २०१६ में, कुमाकोलेंग पंचायत से लगभग ५० लोगों ने 'आत्मसमर्पण' किया। पुलिस ने इसका अपनी विजय के रूप में काफ़ी प्रचार किया। उनमें से कुछ को बाद में अन्य लोगों की पहचान करने के लिए भी गाँव लाया गया। बाद में माओवादियों ने गाँववालों पर दबाव डाला कि वे पुलिस के दबाव में न आएँ और इस तरह के 'आत्मसमर्पण' नहीं करें। पुलिस ने १५ अप्रैल २०१६ को कुमाकोलेंग में एक शिविर आयोजित किया और साड़ी, बर्तन आदि सामान वितरित किया। इसमें अन्य अधिकारियों के साथ ही अतिरिक्त पुलिस अधीक्षक ने भी भाग लिया। इस शिविर में ग्रामीणों, खासकर धाकड़ महिलाओं में से कुछ (धाकड़ पारंपरिक रूप से माओवादियों के करीब नहीं रहे हैं) ने उनके गाँव में पुलिस को एक सीआरपीएफ शिविर कायम करने के लिए कहा। १७ अप्रैल, २०१६ को माओवादी दो लोग सुखमन यादव और भागीरथ की तलाश में गाँव आये। ये दोनों ही आत्मसमर्पण कर चुके थे। कुमाकोलेंग गाँव में आने पर माओवादियों ने गाँव में मौजूद काफ़ी लोगों को बड़ी बुरी तरह मारा। पिटने वालों में वे औरतें भी शामिल थीं जिन्होंने गाँव में पुलिस का शिविर लगाने के लिए कहा था। १८ अप्रैल को पुलिस आई और पिटाई से घायल हुए ७ लोगों को जगदलपुर के महारानी अस्पताल में ले गई और इलाज के लिए भर्ती करवाया। पूरा कुमाकोलेंग गाँव करीब ११० परिवारों का है लेकिन जब

हम वहाँ पहुँचे तो वहाँ सिर्फ ३५ परिवार ही बचे थे। बाकी लोग दूसरे गाँवों में अपने रिश्तेदारों के पास रहने चले गए हैं। जो बाकी हैं, माओवादियों का खौफ उनके चेहरे पर साफ लिखा नज़र आ रहा था।

अगले दिन, हमने उन धाकड़ महिलाओं में से एक जिन्हें माओवादियों ने १७ अप्रैल को मारा-पीटा था, के साथ मुलाकात की। उसका नाम रामवती है और पिटाई में वो भी इतनी घायल हो गई थी कि उसे भी अस्पताल ले जाया गया था। अस्पताल से छुट्टी होने के बाद वे टोंगपाल में किराए के मकान में अपनी बहू और करीब दो साल के पोते के साथ रह रही थी। बेटा कहीं दूसरे प्रदेश में मजदूरी करता है। रामवती के अनुसार उस दिन उसके साथ ही तीन अन्य महिलाओं, देवकी, लछनदेई और चैरो को भी बुरी तरह मारा-पीटा गया था। देवकी को भी अस्पताल में भर्ती होना पड़ा। रामवती का बड़ा बेटा तुलसीराम नाग भी उन लोगों में से था जिन्होंने पुलिस के सामने आत्मसमर्पण किया था। रामवती ने बताया कि कैसे दलम के सदस्य उसे यानी रामवती को उसकी दुकान से बाहर खींच कर ले गए थे और किस तरह उसे उसके पैरों के तलवों पर और उसकी आँख के पास उसे एक कुल्हाड़ी से मारा था।

रामवती के अनुसार गाँव में सुरक्षा बलों का शिविर होने का सभी समर्थन नहीं कर रहे थे।

सौतनार पंचायत में आने वाले पड़ोसी गाँव नामा में सभी ग्रामीणों ने माओवादियों को अपने गाँव से बाहर रखने का संकल्प लिया है और पिछले तीन महीनों से धनुष और तीर और कुल्हाड़ियों के साथ गाँवों में गश्त कर रहे हैं। उन्होंने अपनी पहल को ग्राम सुरक्षा दल जैसा कोई औपचारिक नाम नहीं दिया है और हँसकर खुद को 'टंगिया (स्थानीय भाषा में कुल्हाड़ी) गिरोह' कहते हैं। रात में सुरक्षा के लिए कुछ युवा बारी-बारी से पहरा देने के लिए जागते हैं और बाकी समूहों में सोते हैं।

सौतनार मामले में भी माओवादियों के साथ ग्रामीणों का तनाव तब बढ़ा जब माओवादी शंकर ने आत्मसमर्पण किया और उसके बाद पुलिस के साथ गाँव में एक शिविर लगाकर माओवादियों के साथ सहयोग करने वाले ग्रामीणों की पहचान की। ये दिलचस्प तथ्य भी है और विडंबना भी कि यही ग्रामीण पहले पुलिस से इतना डरते थे कि वे टोंगपाल तक जाने से कतराते थे और अब वही ग्रामीण माओवादियों के खौफ से बचने के लिए पुलिस से सुरक्षा बलों का शिविर लगाने के लिए कह रहे थे। उन्होंने बताया कि पुलिस उनसे कोई अच्छा व्यवहार नहीं करती थी। टोंगपाल जाने के रास्ते में भी कई बार पुलिस उन्हें पकड़ लेती थी और उनसे माओवादियों की तरह बर्ताव करती थी। झूटे इल्जाम में गिरफ्तारी का डर बना रहता था। जब माओवादियों ने आत्मसमर्पण की घटना के बाद गाँववालों पर ज़्यादाती की तब जाकर उन्होंने माओवादियों के कहर से बचने के लिए सीआरपीएफ के शिविर की गुहार की। दूसरा काँटा ग्रामीणों के दिलों में सोमारू की हत्या का गड़ा हुआ था जिसे माओवादियों ने २०१० में मुखबिर होने के आरोप में पीटपीटकर मार डाला था। ग्रामीणों को सोमारू निर्दोष लगता था। कुछ और ग्रामीणों ने भी यह शिकायत की कि जब उन्होंने दलम के लड़ाकों को खाना-भोजन नहीं दिया तब उन्हें भी बुरी तरह पीटा गया।

नामा गाँव में हम हम एक खाली पड़े और इस्तेमाल में नहीं आ रहे खनन कार्यालय में बैठे जो २००८ में बनाया गया था। आसपास के पहाड़ी इलाकों में टिन और कोलंबाईट निकलता है। ग्रामीणों ने कहा कि जो इस क्षेत्र में दूसरे प्रदेशों से आने वाले व्यापारी बड़े पैमाने पर टिन का अवैध खनन किया करते थे लेकिन वो करीब दस साल से बन्द हो गया है क्योंकि टिन को गलाने के लिए नदियों के पानी का इस्तेमाल किया जाता था और वो नदियाँ अब सूख गई थीं। ये ताज्जुब की बात है कि जब खनन बन्द हो गया तब वहाँ खनन विभाग का कार्यालय बना और जो अब तक बगैर इस्तेमाल के खण्डहर हो रहा है।

करीब ५० ग्रामीणों के साथ हमारी बैठक चली। इनमें महिलाएँ भी थीं। गाँववालों ने हमसे पूछा कि उन्हें क्या करना चाहिए जिससे वो मुश्किल हालात से बाहर आ सकें। उनके सवाल के जवाब में हमने उन्हें बताया कि उनकी हालत में तो वे ही सबसे सही फैसला ले सकते हैं। कोई भी बाहर का आदमी आपसे बेहतर परिस्थिति की नज़ाकत को नहीं समझ सकता। उनके आग्रह पर हमने उन्हें कहा कि हम उनकी सुरक्षा, शांति और विकास चाहते हैं। नक्सलियों द्वारा ग्रामीणों की पिटाई और हत्या निश्चित रूप से गलत है और इसे तुरंत बंद कर दिया जाना चाहिए लेकिन गाँव के आसपास सीआरपीएफ शिविरों होना भी कोई दीर्घकालिक समाधान नहीं है। आदर्श रूप में, ग्रामीणों के लिए सबसे अच्छा विकल्प न नक्सली हैं और न ही पुलिस या सीएपीएफ शिविर। सबसे अच्छा तो यही होगा कि आप लोग ही अपने मामलों को सुलझाएँ, उसमें ना पुलिस का हस्तक्षेप हो ना ही नक्सलियों का। जो भी हो, ग्रामीणों को एकजुट रहना चाहिए।

गाँववालों ने हमें बताया कि कोलेंग गाँव में एक साल पहले माओवादियों ने जनपद सदस्य पांडूराम नाग को मार दिया था और उसकी लाश के पास एक नोट छोड़ा था कि अगर किसी ने पुलिस की मुखबिरी की तो उसका भी वही हाल होगा। उन्होंने बिना धमकी माने पुलिस से शिकायत की, और अभी उसकी पत्नी सरपंच है। उन्होंने ये भी बताया कि अभी हाल ही में पुलिस ने एक शिविर का आयोजन किया और साड़ी, कंबल, लुंगी, बर्तन, बल्ले और गेंद जैसे खेल के सामान वितरित किये। जब उनके पास का पूरा सामान खत्म गया तो बाकी बचे लोगों को पुलिस ने प्रति व्यक्ति ५० रुपये दिये। पुलिस ने कुछ मोबाइल फोन भी वितरित किये। ग्रामीणों ने हमें बताया कि हमारे बड़े-बूढ़ों का मानना है कि हमारे लिए पुलिस शिविर के साथ रहना बेहतर होगा।

संक्षेप में, माओवादियों की ज़ोर-ज़बरदस्ती और पुलिस द्वारा गिरफ्तारी के खौफ के हालात गाँववालों के सामने जो विकल्प पेश कर रहे हैं, उसमें से किसी भी विकल्प को चुनना आसान नहीं है। किसका साथ दें, किसके साथ जाना अधिक सुरक्षित होगा - ये पसोपेश उनके दिमाग में भी थी और वे सामूहिक रूप से समाधान खोजने की कोशिश कर रहे थे। जो विकल्प सामने हैं उनमें से कुछ भी चुनना फौरी, हालात की मजबूरी के तहत अस्थिर भी है और कोई बहुत खुशी खुशी किया जाने वाला चयन नहीं है। एक शांतिपूर्ण एवं लोकतांत्रिक समाधान इन ग्रामीणों के भले के लिए, उनके दीर्घकालिक हित में खोजे जाने की ज़रूरत है।

गिरफ्तारियाँ

चारों ज़िलों में ग्रामीणों ने झूटे इल्जामों में बड़ी संख्या में गिरफ्तार किये गए लोगों के बारे में शिकायत की। जिन ग्रामीणों को कानूनी प्रणाली की कोई समझ नहीं है, वे वकीलों की ऊँची फीस का भुगतान करने के लिए मजबूर हैं। इसमें उनकी ज़िंदगी और बर्बाद हो रही है। कानून यातना के एक औजार के रूप में इस्तेमाल किया जा रहा है, न कि न्याय या शांति कायम करने के लिए।

इंद्रावती राष्ट्रीय उद्यान क्षेत्र

तुंगेवाड़े, मुन्ना वडेंजा चिन्ना वडेंजा: जनवरी २०१६ में इन तीन लोगों को नक्सली अपराधों के लिए सागमेटा पंचायत से गिरफ्तार किया गया।

इस साल पहले भी पुलिस ने तीन लड़कों को जो पास की एक छोटी नदी की धार में नहा रहे थे, उन्हें गोली मार दी थी। उनकी शिनाख्त बड़े अल्वेडा गाँव से सुक्कू, दोक्के गाँव से सुखराम, और गुन्डापुर गाँव से सोमा के तौर पर हुई थी। मृतकों को हेलिकॉप्टर से महाराष्ट्र ले जाया गया और उसके बाद बीजापुर भेजा गया। बाद में पुलिस द्वारा ग्रामीणों को बेदरे में बुलाकर अंतिम संस्कार के लिए शव सौंप दिये गए।

इस क्षेत्र से कई ग्रामीण २००५ में सलवा जुद्ध के शिविर में गये थे। ताड़मेंडरी उन पहले गाँवों में से एक था जिस पर जुद्ध ने हमला किया था। हमें बताया गया कि पहले जुद्ध के लोग आए और ग्रामीणों से संघम या दलम के साथ जुड़े लोगों के नाम पूछे। जब ग्रामीणों ने इनकार कर दिया, तो जुद्ध के लोगों ने गाँववालों को पीटा। उनमें से कुछ गंभीर रूप से घायल भी हुए। बाद में, वहाँ जुद्ध और दलम के लोगों के बीच एक क्रॉस फायरिंग हुई। जब क्षेत्र में पुलिस शिविर आना शुरू हुआ, तब दलम के लोगों ने इस डर से कि कहीं पुलिस बल गाँव के स्कूलों को आश्रय या आधार न बना ले, स्कूलों को जला दिया। वहाँ पिछले १० वर्षों से गाँव में कोई स्कूल नहीं बना है। बच्चों को गाँव से ६ किलोमीटर दूर फरसेगढ़ गाँव जाना पड़ता है। उस समय माओवादियों को पूरी तरह मिटा डालने की तैयारी से चारों तरफ से हमला हुआ था और कई लोग मारे गए थे।

मुकाबेली में एक ग्रामीण की दो पत्नियाँ थीं और दोनों को पुलिस ने गोली मार दी थी। उनमें से एक गर्भवती भी थी। एक छह वर्षीय लड़के को भी गोली मार दी थी। अधिकांश ग्रामीण पुलिस के दबाव में सुरक्षा बलों के शिविर में रहने के लिए गये थे। २००८ या २००९ में माओवादियों ने पास के एक गाँव के पटेल को मुखबिरी के संदेह में मार दिया था। उस जैसे कुछ अन्य संदिग्ध मुखबिरों को माओवादियों ने मारा था। हालाँकि यह बात भी कुछ लोगों ने कही कि माओवादियों ने ग्रामीण लोगों की दवाओं के साथ मदद की और पढ़ रहे युवाओं की भी अन्य तरीकों से मदद की।

कांगेर नेशनल पार्क क्षेत्र - सरकार के जन-जागरण अभियान में भाग लेने के लिए ग्रामीणों को लुभाने गिरफ्तारियों का इस्तेमाल

दरभा में २६ अगस्त २०१५ को पुलिस ने हाट-बाज़ार के लिए गये भडरीमहू के ५ ग्रामीणों को गिरफ्तार कर लिया था। तीन अन्य लोगों को पुलिस ने उनके घरों से उठाया गया था। पुलिस ने ही कुछ दिन बाद भडरीमहू में खबर भेजी कि अगर अपने लोगों की रिहाई चाहते हो तो पूरा भडरीमहू गाँव २६ सितंबर, २०१५ को दरभा आये। तो गाँव से हर कोई गया, लेकिन हमारे गिरफ्तार बेगुनाह आदमियों को रिहा करने के बजाय पुलिस ने ग्रामीणों को साड़ियाँ और अन्य वस्तुएँ वितरित कीं। पत्रकार संतोष यादव जो गिरफ्तारी मामले पर रिपोर्ट करने के लिए उसी वक़्त वहाँ मौजूद था, उसे पुलिस से असुविधाजनक सवाल पूछने पर गिरफ्तार कर लिया गया था।

ऐसे ही तौर-तरीके पुलिस व प्रशासन ने जनवरी से मार्च २०१६ के दौरान चिंतलनार-चिंतागुफा क्षेत्र में भी अपनाए थे जहाँ गिरफ्तार किए गए लोगों के रिश्तेदारों का पुलिस जन जागरण अभियान की संख्या बढ़ाने के लिए इस्तेमाल करती थी।

अंतागढ़, कांकेर ज़िले में गिरफ्तारियाँ

बदरंगी गाँव के दो आदमी पीनाशी दर्रो और रामू दर्रो को नक्सली होने के इल्जाम में पुलिस द्वारा उठाया गया था। पीनाशी अब पिछले एक साल से जेल में है। ग्रामीणों का आरोप था कि यह साबित करने के लिए कि वह एक नक्सली है, एक टिफिन बम उसके घर के पीछे रखकर बरामद दिखाया गया था। जब पुलिस पीनाशी को गिरफ्तार करने के लिए आयी, तो उसके बड़े भाई सोमा को भी बहुत मारा। उसे एक दिन के लिए शिविर में भी रखा। ताड़ोकी की पुलिस ने उसे छोड़ने के लिए रिश्वत की माँग की। सोमा ने अन्य ग्रामीणों से २०,००० रुपये उधार लेकर पुलिस को रिश्वत दी लेकिन इससे पहले कि वह गाँववालों को उनका उधार लौटा पाता, मारपीट के दौरान आई चोटों से उसकी मृत्यु हो गई। रामू को ३ महीने पहले उठाया था। उसकी पत्नी की मृत्यु हो गई है और उसके तीन छोटे बच्चे, जिनमें से दो १०-१२ साल की लड़कियाँ हैं, पूरी तरह असहाय और गाँववालों के भरोसे हैं। ग्रामीणों का दावा था तीनों में से किसी का भी नक्सलियों के साथ कोई लेना देना नहीं था।

२००८ में सडरंगी गाँव में, एक कांस्टेबल जय सिंह की हत्या के आरोप में जगजीवन दर्रो को गिरफ्तार किया गया था। वारंट २०१४ में ही आया था। ऐसे अनेक वारंट आते हैं जिनमें पुलिस मनमाने ढंग से जो भी नाम वे चाहते हैं मौजूदा अपराधों पर चरपा कर देते हैं। वर्ष २०१५ में, बीएसएफ ने जगजीवन को पुलिस एसपी के सामने एक बड़े जलसे में आत्मसमर्पण करते दिखाया था। आत्मसमर्पण अवधि के दौरान वह १५ दिनों के लिए पुलिस के साथ था। हालाँकि, उसके मामले पर कोई कागजी काम नहीं किया गया था - और उसका नाम अभी भी पुलिस रिकॉर्ड में फंसा था- इसलिए उसे २०१६ में गिरफ्तार किया गया। जिस आदमी को पुलिस ने पहले आत्मसमर्पण करते दिखाया और उसका जलसा किया, उसी जगजीवन दर्रो को २०१६ में गिरफ्तार कर लिया। जगजीवन शादीशुदा है और उसके तीन बच्चे भी हैं। सबसे बड़ा ६वीं में है, और सबसे छोटा ४ साल का है। इससे ऐसा नहीं लगता कि वह नक्सली हो।

बलात्कार और यौन हिंसा

इंद्रावती राष्ट्रीय उद्यान क्षेत्र में बलात्कार के इल्जाम

चुचकुंटा गाँव की एक जवान औरत, फुल्लो के बारे में हमें बताया गया कि जब वह एक सिंचाई तालाब पर काम कर रही थी तब उसके साथ सुरक्षा बलों ने बलात्कार किया था। उस पर पुलिस ने नक्सली होने का इल्जाम लगाया था हालाँकि ग्रामीणों ने कहा कि वह नक्सली नहीं थी। फिर उसी आरोप पर वो गिरफ्तार भी कर ली गयी। उन्होंने बताया कि उसके साथ बलात्कार करने वाले एसपीओ और ज़िला सुरक्षा बल के अन्य लोग थे। ग्रामीणों के मुताबिक बलात्कार की घटना १७-१८ जनवरी २०१६ को हुई थी। हमने फरसेगढ़ सुरक्षा शिविर में पदस्थ पुलिस अधिकारी शिवानंद तिवारी से इस घटना के बारे में पूछा तो उन्होंने बताया कि वह स्थानीय क्षेत्र दलम के प्लाटून २ से थी और उसके साथ बलात्कार से उन्होंने पूरी तरह इनकार किया। उन्होंने दावा किया कि जब तक उसे जेल नहीं भेजा गया था तब तक उसके पिता को उसके साथ रखा गया था। अब वह जगदलपुर जेल में है।

अंतागढ़ के एक गाँव में बीएसएफ एसपीओ द्वारा बलात्कार और यौन शोषण

जब हम एटेबाल्का गाँव गए तो हमारे सामने एक नया ही रहस्योद्घाटन हुआ। वहाँ की एक लड़की के साथ बीएसएफ शिविर के एक एसपीओ, फागू राम के बेटे बुदु राम, द्वारा यौन शोषण किया गया था। वह एसपीओ अनुसूचित जाति समुदाय से था। वो नियमित रूप से लड़की के घर का चक्कर लगाया करता था। किसी माकूल मौके को पाकर उसने लड़की के साथ बलात्कार किया। ऐसा उसने २-३ बार किया। जब लड़की ने विरोध किया तो एसपीओ ने उसे धमकी दी कि एक पुलिस मुखबिर और एसपीओ होने वजह से ये उसका हक है कि वो जिससे चाहे शारीरिक संबंध बना सकता है। ये सब करने की स्वतंत्रता उसका इनाम है। उसने लड़की को शादी करने का भ्रम भी दिया। लड़की के घरवालों को इस प्रकरण की जानकारी नहीं थी। जून २०१५ में घरवालों ने लड़की की पारंपरिक शादी भी कर दी। इस बीच लड़की उस एसपीओ से गर्भवती भी हो गयी थी। शादी के कुछ महीनों के भीतर जब लड़की का पेट बढ़ना शुरू हुआ तो उसके ससुराल वालों ने उसकी जाँच करवाई और उन्हें लड़की के गर्भवती होने के बारे में पता चला। ज़ाहिर है कि ससुराल वाले इस बात से बहुत नाराज़ हुए और उन्होंने लड़की को ना केवल उसके मायके वापस भेज दिया बल्कि उन्होंने मांग की कि उन्हें इस धोखाधड़ी का मुआवजा दिया जाना चाहिए। लड़की को तो वापस मायके भेज ही दिया गया। लड़की ने अपने घरवालों को तब जाकर एसपीओ के और उसके प्रसंग के बारे में बताया। घरवालों ने एसपीओ की जाँच-पड़ताल की तो पता चला कि उसकी पहले से ही दो पत्नियाँ हैं। गाँव के स्तर पर बात तय करने के लिए एक पंचायत बुलायी गयी। पंचायत ने यह निर्णय लिया कि एसपीओ को लड़की के परिवार को ५१००० रुपये का भुगतान करना चाहिए। बलात्कारी एसपीओ ने भी पंचायत का फैसला स्वीकार किया। लेकिन पंचायत हुए भी महीनों बीत चले, अब तक केवल २५००० रुपये का भुगतान

एसपीओ ने किया है। पीड़ित लड़की ने ज़िला कलेक्टर को भी एक शिकायत लिखी, जिसका उसे कोई जवाब नहीं मिला था। वहीं दूसरी तरफ एसपीओ के खिलाफ बीएसएफ द्वारा कोई कार्रवाई नहीं की गई है। इस तरह के शिविर और जवानों, एसपीओ, सहायकरक्षकों या डीआरजी को मिलने वाले अधिकार इस तरह के यौन शोषण का कारण बनते हैं, और आसपास के क्षेत्र में सभी महिलाओं को असुरक्षित बनाते हैं। अन्य के आसपास के क्षेत्र में हमने कम से कम एक बलात्कार के आरोपों के बारे में सुना, जिसमें मौत भी हुई है, और जो बीएसएफ शिविर से सटे हुए गाँव का मामला है। लेकिन उसके परिवार वाले बात करने के लिए तैयार नहीं थे।

माओवादी हिंसा

कांगेर पार्क इलाके में और अंतागढ़ के गाँवों में, दोनों जगह हमने पिछले समय में पुलिस और माओवादी दोनों ही ओर की खून खराबे और हत्याओं की घटनाओं के बारे में सुना। उदाहरण के लिए, अंतागढ़ में गाँव सरन्डी में, चार लोगों को पुलिस ने पिछले दस वर्षों में मारा है। इनमें मेघनाद धुरु गोंड भी शामिल है जो १५ साल के लिए सरपंच था। उसे कुल्हाड़ी से २०११ में मार डाला था। हालाँकि पिछले पाँच सालों से माओवादी इस क्षेत्र में नहीं आये हैं फिर भी, जैसा कि ऊपर उल्लेख किया है, राज्य के दमन और ग्रामीणों को पुलिस के साथ मिलाने की कोशिशों से माओवादी हिंसा और मुखबिरों की हत्या के मामलों में बढ़ोत्तरी हुई है।

अध्ययन दल का राज्य पुलिस और प्रशासन द्वारा उत्पीड़न

१७ मई २०१६ को हमारा अध्ययन दल बस्तर से रायपुर लौटा। नामा और कुमाकोलेंग से लौटते हुए रास्ते में फरसेगढ़ में हमें रोका गया और कैम्प इंचार्ज पुलिस अधिकारी शिवानंद तिवारी ने 'दोस्ताना चाय' पर चर्चा के लिए हमें आमंत्रित किया है, हमारे फोन नंबर ले लिये और ज़ोर देकर हमारी फोटो खिंचवाई। हममें से एक साथी नंदिनी सुंदर ने वहाँ, और पूरे पाँच दिनों के दौरान एकमात्र वहीं, अपना नाम ऋचा केशव बताया। उन्होंने ऐसा अपने पूर्व अनुभवों को ध्यान में रखते हुए यह सोचकर किया था कि अगर उन्होंने अपना असली नाम पुलिस को बताया तो वे पूरे दल को ही आगे और कहीं भी आने-जाने नहीं देंगे। यह उल्लेखनीय है कि नंदिनी सुंदर ने सलवा जुडूम के खिलाफ सर्वोच्च न्यायालय तक लड़ाई लड़ी और छत्तीसगढ़ सरकार की जनविरोधी कार्रवाइयों को देश के सामने उजागर किया था। इसके पहले उनके राज्य में आवागमन को पुलिस व प्रशासन द्वारा अवरुद्ध किया गया है। यही सोचकर उन्होंने अपना असल नाम न बताते हुए काल्पनिक नाम बताया ताकि दल का तथ्यों की जाँच का मकसद प्रभावित न हो। हमारे नाम

वगैरह बस्तर के सभी पुलिस स्टेशनों को भेजे गए मानो हम कोई संदिग्ध लोग हों जिन पर नज़र रखनी ज़रूरी हो। बाद में हमें कुछ अन्य जगहों पर भी रोका और पूछताछ की गई।

जैसे ही हम बस्तर से १७ मई, २०१६ को निकले, कुमाकोलेंग और नामा के ग्रामीणों के नाम पर एक फ़र्जी शिकायत दर्ज की गयी जिसमें आरोप लगाया कि हम लोगों का अध्ययन दल कुमाकोलेंग और नामा गाँवों में गया था और वहाँ हमने ग्रामीणों को धमकी दी कि अगर वे माओवादियों के साथ सहयोग नहीं करेंगे तो उनके गाँवों को जला दिया जाएगा और वे मार डाले जाएँगे। यह भी आरोप लगाया गया कि अध्ययन दल सरकार के खिलाफ़ ग्रामीणों को भड़काने के लिए गया था। उक्त तथाकथित ग्रामीणों द्वारा की गई शिकायत में यह भी कहा गया कि दल के लोगों ने ऋचा केशव का नाम बताया जबकि यह नाम केवल पुलिस की ही जानकारी में था। इस असत्यापित शिकायत को अपने व्यक्तिगत फेसबुक पेज पर बस्तर ज़िला कलेक्टर अमित कटारिया द्वारा पोस्ट कर दिया गया और सोशल और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया में इस तरह की अफ़वाहें फैलाई गईं कि अध्ययन दल का रुझान 'माओवादी' है। पूरे प्रकरण में इस तथ्य को भी जोड़ दिया गया कि अध्ययन दल के सदस्यों में से एक जेएनयू की प्रोफेसर भी है और यह स्वाभाविक ही है कि देश के इस अग्रणी विश्वविद्यालय के शिक्षक और विद्यार्थी 'राष्ट्र विरोधी' और 'माओवादी' होंगे। जी न्यूज ने एक पक्षपाती और हम लोगों का अपमान करनेवाली आधे-अधूरे तथ्यों के साथ कहानी बनाकर पेश की। दरभा थाने के बाहर पुलिस द्वारा ग्रामीणों का एक प्रदर्शन आयोजित किया गया, और बाद में फिर से २३ मई को राष्ट्रपति के नाम इन तथाकथित ग्रामीणों की ओर से एक ज्ञापन भेजा गया जिसमें इस अध्ययन दल के सदस्यों को गिरफ़्तार करने और नौकरी से बर्खास्त करने का आग्रह किया गया। २७ मई २०१६ को सामाजिक एकता मंच, जो पहले सरकार की तरफ़ से एक निगरानी समूह की तरह काम करता था और अब जिसे कई नए नामों से जाना जाता है, के सदस्यों ने जगदलपुर में एक विरोध प्रदर्शन का आयोजन किया जिसमें अध्ययन दल की दोनों महिला सदस्यों अर्चना प्रसाद और नंदिनी सुंदर की तस्वीरें लगाकर उन्हें माओवादी और कुलीन कहकर आलोचना की गई।

इंडियन एक्सप्रेस और नईदुनिया ने ग्रामीणों का साक्षात्कार लेकर यह उजागर किया कि कैसे पुलिस शिकायतें गढ़ रही हैं। इंडियन एक्सप्रेस के संवाददाता (२६ मई २०१६) ने ग्रामीणों को जब शिकायत की एक प्रति दिखाई तब उन्होंने स्पष्ट रूप से कहा कि नामा गाँव में से कोई भी शिकायतकर्ताओं में नहीं था। उन्होंने यह भी अंदाज़ा प्रकट किया कि हो सकता है हस्ताक्षर उन लोगों के हों जिन्होंने पुलिस के समक्ष आत्मसमर्पण किया था और जिन्हें एसपीओ के रूप में नौकरी मिली थी। इसलिए शिकायतकर्ता तथाकथित ग्रामीण वास्तव में वे लोग हो सकते हैं, जो पहले ही आत्मसमर्पण कर चुके हैं या एसपीओ हैं और पुलिस के नियंत्रण में काम कर रहे हैं। उन्होंने यह भी संवाददाताओं को स्पष्ट बताया कि माओवादियों का समर्थन करने के लिए उन्हें किसी ने नहीं कहा था।

अपने प्रारंभिक निष्कर्षों के साथ अध्ययन दल ने प्रेस विज्ञप्ति में अपनी स्थिति स्पष्ट कर दी थी कि आम लोगों की परेशानियों के लिए माओवादी और राज्य, दोनों ही ज़िम्मेदार थे। लेकिन धमकाया जाना और हमें

अपराधी साबित करने की तथा लोगों के दिलों में हमारी छवि बिगाड़ने की कोशिशें जारी है। हमारे अध्ययन दल के साथ जो स्थानीय लोग मिले, उन्हें बेहद परेशान किया गया और अभी भी किया जा रहा है। मंजू कवासी, सीपीआई की एक सदस्य, जो टीम के साथ कुछ जगहों पर गयी थी, के घर आधी रात को पुलिस ने दौरा किया और सुकमा और कुकानार पुलिस के समक्ष पेश होने के लिए कहा। नामा गाँव के हमारे स्थानीय संपर्क मंगला को लगातार पूछताछ के लिए बुलाया गया। हमने रायपुर से किराए पर जो कार टैक्सी ली थी उसके ड्राइवर से भी पूछताछ की गई, लगातार पीछा किया गया और उसे रायपुर से पूछताछ के लिए जगदलपुर बुलाया गया है। पुलिस ने उन सभी लोगों से संपर्क किया जिनसे हम इस यात्रा के दौरान मिले थे। उनमें हमारे पुराने निजी दोस्त भी शामिल थे। बस्तर के पुलिस अधीक्षक ने जेएनयू और दिल्ली विश्वविद्यालय के कुलपति को पत्र लिखा कि उन्हें इन विश्वविद्यालयों के प्रोफेसरों के खिलाफ शिकायत मिली है जो वे कुलपतियों को 'आगे अनुसरण' के लिए भेज रहे हैं। हालांकि, कोई पत्र हमें नहीं भेजा गया जबकि शिकायत हमारे ही खिलाफ की गई थी। इससे यही ज़ाहिर होता है कि छत्तीसगढ़ पुलिस और प्रशासन का उद्देश्य वास्तविक जाँच न करते हुए हमारे खिलाफ मीडिया में निंदा अभियान चलाना है। जेएनयू और डीयू, दोनों ही जगहों पर आरटीआई के तहत जानकारी निकाली गई है कि क्या हमने बस्तर जाने के लिए छुट्टी ली थी या नहीं। (जो कि हम सिद्धांततः हमेशा ही लेते हैं।)

लेकिन इस अध्ययन दल की कहानी कोई अनोखी या अद्वितीय नहीं है। 'माओवादी हमदर्दों और समर्थकों' के आधार पर छत्तीसगढ़ में प्रशासन द्वारा वकीलों और पत्रकारों को परेशान किया जाता है। तीन पत्रकार इसी आरोप में जेल में हैं और एक अभी हाल ही में रिहा हुआ है। यह तथ्य और साफ़ होता जा रहा है कि बस्तर में आदिवासियों की स्थिति बहुत खराब है और राज्य तथा माओवादियों के संघर्ष में उनका रोजमर्रा का जीवन मुश्किल हो गया है। उनका लगातार उत्पीड़न और अत्याचार बहुत बड़ी चिंता का विषय है और जिसने भी इस उत्पीड़न और अत्याचार को उजागर करने की कोशिश की है, उसे राज्य पुलिस के गुस्से का सामना करना पड़ा है। छत्तीसगढ़ एक असहिष्णु पुलिस राज्य है, यह अधिक से अधिक स्पष्ट होता जा रहा है और इस अध्ययन दल से भी जिस तरह पुलिस प्रशासन ने व्यवहार किया है, उससे भी वे यही सुनिश्चित करना चाहते हैं कि कोई स्वतंत्र अध्ययन समूह क्षेत्रों का दौरा ही न करे और राज्य के आदिवासियों की गंभीर और चिंताजनक मुद्दों को आवाज़ न दें।

सीपीआई और सीपीआई (एम) के महासचिवों ने मुख्यमंत्री और केन्द्रीय गृह मंत्री को लिखा है कि लोकतंत्र में अन्य राजनीतिक दलों के सदस्यों उत्पीड़न नहीं किया जाना चाहिए। हालाँकि, यह स्पष्ट है कि भाजपा की सामान्य लोकतांत्रिक प्रक्रिया में कोई दिलचस्पी नहीं है।

माँगें

राजनीतिक दलों से

१. एक सर्वदलीय प्रतिनिधि मंडल बस्तर, विशेष रूप से आंतरिक गाँवों में से कुछ पर जाए, और संघर्ष के समाधान के लिए जो समूह इस लड़ाई में शामिल हैं या प्रभावित हैं, उनके साथ बातचीत शुरू करें।

२. राजनीतिक दलों को माँग करनी चाहिए कि केंद्र और राज्य सरकार सभी राजनीतिक दलों और नक्सलियों के साथ बातचीत शुरू करें, और एक ऐसी समग्र व्यापक योजना के साथ सामने आएँ जिसमें लोगों के अधिकारों और उनके विकास के लिए प्रमुख स्थान हो।।

३. राज्य में सत्तासीन भाजपा को विपक्षी राजनीतिक दलों के सदस्यों को गिरफ्तार किए और उनके सदस्यों को डराये-धमकाए बिना स्वतंत्र रूप से उनकी संवैधानिक राजनीतिक गतिविधियाँ संचालित करने के लिए अनुमति देनी चाहिए।

केन्द्र और राज्य सरकार से

१. २००५ के बाद से पुलिस, सुरक्षा बलों और नक्सलियों द्वारा जितनी भी गिरफ्तारियाँ, समर्पण, बलात्कार, अन्य अत्याचार और जितनी भी मुठभेड़ें हुई हैं उनकी उच्च स्तरीय न्यायिक जांच होनी चाहिए।

२. इन सभी मामलों में मुकदमा चलाया जाना चाहिए और अपराधी जो भी हो, उसकी परवाह किए बिना मुआवजा दिया जाना चाहिए।

३. शिविर हटाये जाना चाहिए।

४. लोगों के वन अधिकार और भूमि अधिकारों को मान्यता दी जानी चाहिए। कोई भी परियोजनाएँ ग्रामीणों की पूरी जानकारी में लए बिना, और ग्राम सभा की सहमति के बिना हरगिज नहीं लागू की जानी चाहिए।

५. सरकारी योजनाओं के तहत किए गए सभी कार्यों का जमीन पर सत्यापन के साथ एक पूर्ण लेखाजोखा किया जाना चाहिए। विशेष रूप से नरेगा को ठीक तरह से लागू किया जाना चाहिए, और सभी लंबित बकाया राशि का तुरंत भुगतान किया जाना चाहिए।

६. राजनीतिक कार्यकर्ताओं, विद्वानों, पत्रकारों, वकीलों और आदिवासी अधिकारों के लिए लड़ने वाले दूसरे लोगों का उत्पीड़न रोका जाना चाहिए और उनके आनेजाने की स्वतंत्रता और सुरक्षा सुनिश्चित की जानी चाहिए।

माओवादियों से

१. माओवादियों को विकास कार्य होने देना चाहिए।

२. चुनाव के लिए खड़े होने जैसी राजनीतिक गतिविधियों की अनुमति देनी चाहिए।

३. लोगों की मारपीट और मुखबिरों की हत्या बंद कर देनी चाहिए।
